OPINION TODAY
National Bilingual (Hindi–English) Quarterly, Peer-Reviewed and Refereed Journal
Vol. 02, No. 02 (2026): April-June ISSN No. : 3108-2661

# राजस्थानी संगीत में जनजातियों का योगदान: एक अध्ययन

**निशी चौहान**
शोधार्थी
मंच कला विभाग, ललित कला संकाय,
स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ–250005, उत्तर प्रदेश, भारत
Chauhan.nishi500@gmail.com
**प्रो० डॉ० भावना ग्रोवर**
निर्देशिका
विभागाध्यक्षा, मंच कला विभाग, ललित कला संकाय,
स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ–250005, उत्तर प्रदेश, भारत

**सारांश**

राजस्थान अपने समृद्ध इतिहास, जीवतं रंग और संस्कृति के लिए जाना जाता है। अरावली की पर्वत श्रेणी की तलहटी विचरण करने वाली अनेकों जनजातियों का योगदान राजस्थान के संगीत में सर्व सराहनीय हैं। राजस्थान में निवास करने वाली जनजातियों ने न केवल अपनी वीरता अपितु अपनी अनछुई संस्कृति, सभ्यता के अतिरिक्त संगीत की तीनों विधाओं मे विश्व स्तर तक पहचान दिलाई हैं। अपनी परंपराओं को सहेजने वाली कुछ निम्न जनजातियो एवं उनके द्वारा परिरक्षित संगीत का उल्लेख शोधार्थी अपने शोध-पत्र में करेगी। उनके द्वारा गायन व वादन व नृत्य की विधाओं का वर्णन करने का प्रयास किया गया हैं, किन्तु इन सांगीतिक सभ्यता का पालन करने वाले वह लोक संगीतज्ञ या तो कम हो गये हैं विलुप्त होने के स्तर पर हैं। जिसका उल्लेख शोधार्थी ने अपने शोध पत्र में किया हैं। शोधार्थी अपने शोध- पत्र द्वारा राजस्थान की जनजातियों के संगीत की चर्चा कर उन्हें जीवंत करने का प्रयास किया हैं। शोधार्थी के शोध- पत्र द्वारा शायद राजस्थान की जनजातियों के संगीत का चलन लोक मनुजो पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकता हैं ,जिससे उनके संगीत को सहेजने के लिए नये शोधार्थीयों को एक नई दिशा मिले।

**कीवर्ड**

राजस्थान, जनजाति, संगीत, गीत के प्रकार, वाद्यों के प्रकार, अप्रचिलित संगीत का पुर्नत्थान।

**प्रस्तावना**

शोध प्राविधि:- मैने मेरे शोध पत्र की कार्य प्राविधि को साहित्य समीक्षा के आधार पर पूर्ण किया हैं। इस पत्र में ऐतिहासिक पद्धिती को भी दर्शाया गया हैं, जिसमें वैदिक काल से वर्तमान तक कालानुक्रमिक सांगितिक समीक्षा का वर्णन हैं, इसके अतिरिक्त विभिन्न समुदाय व समुदायों के संगीत के विषय में भी वर्णन किया गया हैं।

OPINION TODAY
National Bilingual (Hindi–English) Quarterly, Peer-Reviewed and Refereed Journal
Vol. 02, No. 02 (2026): April-June ISSN No. : 3108-2661

**सम्पूर्ण लेख**

विद्वानों के विचारानुसार संगीत एक स्वच्छंद ब्रह्मविद्या हैं। संगीत की उत्पत्ति व विकास में स्वयं दैवीय शक्तियाँ कार्यरत रही हैं, अर्थात इस कला के प्रेरक शिव, सरस्वती, ब्रह्मा जी, किन्नर और गन्धर्व माने गये है। सृष्टि के निर्माण के समय से ही शिव को ताडंव , माँ सरस्वती को वीणावादिनी और माधुर्य कंठ की प्रणेता कहा गया हैं, अर्थात संगीत का जन्म पृथ्वी के जन्म के साथ हो गया था।

डॉ० अरूण आप्टे ने लिखा हैं - The Omkar is beginning of music and this very reason music has been a universal language. संगीत एक ऐसा शक्तिशाली साधन हैं, जो मनुष्य को साधारण से असाधारण व प्रतिभावान बनाता हैं। संगीत का व्याकरण सृष्टि के समय से ही हैं। दैवीय शक्तियों के सांगितिक उत्पत्ति के बाद वैदिक काल से ही संगीत की परंपरा रही हैं। संगीत तीन विद्याओं 1. गायन 2. वादन 3. नृत्य का समावेश हैं।

वैदिक काल को अतिप्राचिन काल माना गया हैं और इसी काल में संगीत के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। इस काल में चारों वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अर्थववेद का पूर्ण रूप से विस्तार हो चुका था। यह चारों ही वेद सांगितिक दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। प्रथम वेद ऋग्वेद में पक्षियों की बोली के आधार पर मात्रा के काल को मापा जाता था। ऋग्वेद में ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत एवं अर्ध मात्रा का भी विवरण मिलता हैं। ऋग्वेद में गायन के साथ वाद्य का भी उल्लेख प्राप्त होता हैं।

यजुर्वेद में ब्राह्मण तथा अरण्यक ब्राह्मण से स्पष्ट हैं कि सामगान केवल सामगायको तक ही सिमित था। सामगायकों के प्रमुख गायक को उद्धाता कहते थे, तथा इनके साथ एक समूह इनकी ही आवाज में आवाज मिलाकर गान करते थें। यज्ञ सम्बन्धी कर्मकाण्ड में गान के अतिरिक्त पाण, तूषण, दुन्दुभी, भूदुन्दुभी, गाथा गान और वीणा वाद्य के वादन का उल्लेख मिलता हैं। अर्थात इस समय में भी संगीत का अधिक बोलबाला था।

**"यमाघटाः कर्कर्यः संवदन्ति।2**

अर्थववेद में आघाट, कर्करी जैसे वाद्यों की प्रतिध्वनि सदैव ही आंदोलित होती रही हैं, दुन्दुभी वाद्य का प्रयोग वीर योद्धाओं में पौरूष्य के संचार के लिए होता था। अर्थववेद में भी सामगान के साक्ष्य प्राप्त होते हैं।

अन्तिम किन्तु संगीत का प्रमुख आधार वेद सामवेद को माना गया हैं, सामवेद में सांगितिक ऋचाओं का गान किया जाता था। इन ऋचाओं का गायन आज भी यज्ञ आदि व पूजा अर्चना के समय किया जाता हैं। ऋचाओ के गायन के समय तत् वाद्यों की जननी कही जाने वाली 'अध्वर्य' वीणा वाद्य का प्रयोग होता था, सामवेद में वीणाओं के कई प्रकार थे, जिनमें काण्ड वीणा, वाण वीणा, अपघाटिला, कर्करी वीणा आदि तत वाद्य थे, इसके अतिरिक्त अवनद्ध वाद्यों में दुदुंभि, भुदुदुंभि वाद्य थे, जिसका प्रयोग "दण्ड" द्वारा किया जाता था, इस दण्ड को "आहनन" कहा जाता था, दुदुंभि वाद्य का प्रयोग वीरों के उत्साह के लिए किया जाता था। सुषिर वाद्यों में वेणु वाद्य को श्रेष्ठ माना गया।

इसी संदर्भ में भारतीय सभ्यता और नैतिकता के अद्भुत मिश्रण वालें काल रामायण काल में भी संगीत के विषय का बोध होता हैं। रामायण कवि बाल्मीकि द्वारा रचित एक गेय महाकाव्य हैं। महाकाव्य के गेय को वीणा के सुरावली व पाणिन वाद्यों के साथ किया जाता था। रामायण काल में गायन, वादन व नृत्य के समावेश के साथ साथ मुर्च्छना का भी प्रयोग होता था। सातों स्वरों के विषय में भी रामायण काल में साक्ष्य प्राप्त होता हैं, रामायण काल में संगीत का प्रयोग चित्त मनोरंजन के अतिरिक्त देव स्तुति के लिये किया जाता था। इस काल में लंकापति रावण स्वयं एक महान संगीतज्ञ थें, जिन्होनें अपने आराध्य भगवान शिव के लिए शिव स्त्रोत का पाठन किया, जिसका साक्ष्य वर्तमान में भी प्राप्त होता हैं, इसके अतिरिक्त जब हनुमान लंकापुरी में माता सीता से भेंट के बाद रावण के महल में प्रवेश करते हैं,

*2.अर्थवेद, भारतीय लोक वाद्य, डॉ० कुमारी कौशल, पृ० सं० - 41, 2009*

OPINION TODAY
National Bilingual (Hindi–English) Quarterly, Peer-Reviewed and Refereed Journal
Vol. 02, No. 02 (2026): April-June ISSN No. : 3108-2661

संगीत का कक्ष देखते हैं, उसके संगीत कक्ष में मत्तकोकिला वीणा, विपंची वीणा, पटह, डिण्डिम मडडुक, मुरज, चोलिया, वेणु आदि वाद्यों का संकलन उन्हें दिखाई देता हैं, जिसका उल्लेख सुदंरकाण्ड में मिलता हैं, यानी रावण संगीतज्ञ था और वीणा वाद्य का ज्ञाता भी। रामायण काल गायन, वादन व नृत्य का अद्भुत काल था। रामायण काल के बाद महाभारत काल का युग आया, जिसमें वैदिक काल के संगीत में परिवर्तन हो गया था। महाभारत काल में संगीत की दो धाराओं का उल्लेख मिलता हैं। 1. मार्गी संगीत जो देवताओं की स्तुति के लिए तो दूसरा देशी संगीत का उल्लेख मिलता हैं, जो क्षेत्रीय लोक रंजन के लिए प्रसिद्ध था। महाभारत काल में तत्, वितत्, घन और सुषिर वाद्यों का उल्लेख मिलता हैं। तन्त्र या तत् वाद्यों में तुम्ब, कच्छपि, वल्लकी और महती वीणा थी, तो सुषिर वाद्यों में वेणु, गोविंश्निक, गोमुख वाद्य, अवनद्ध वाद्यों में भेरी, मृदंग, झर्झर, मुरज, पुष्कर, दुन्दुभि, पणव आदि अवनद्ध वाद्यों का उल्लेख मिलता हैं। युद्ध के समय शंख, आनक, मुरज, पटह, पणव आदि वाद्यों का प्रयोग किया जाता था।

महाभारत काल से ही संगीत की दो विधाओं का प्रचलन हुआ जो वर्तमान में भी विद्यमान हैं:-

**1. मार्गी संगीत (ईश्वरीय संगीत) 2. देशी संगीत (क्षेत्रीय मनुजो का लोक संगीत)**

लोक संगीत:- मैने अपने शोध पत्र में अभी तक मार्गी संगीत के विषय में ही बात की, भले ही मार्गी संगीत नाम महाभारत काल में आकर ही उदित हुआ हो, किन्तु वेदों और युगों में संगीत केवल ईश्वरीय अराधना के लिए ही था, जो मार्गी संगीत का ही रूप था। लोक संगीत या देशी संगीत का जन्म आमजन द्वारा अपने मनोरंजन के लिए किया गया। लोक संगीत के द्वारा जन - मानस अपने भावो को अभिव्यक्त करता हैं, जिसमें प्रेम, उल्लास, हर्ष, शोक, विरह आदि भावों की अभिव्यक्ति होती हैं।

वेद व्यास ने लोक शब्द को साधारण शब्दों में लिखा हैं -

**"अज्ञानतिमिरान्धस्य लोकस्य तु विचेष्टतः।**
**प्रत्यक्षदर्शी लोकानां सर्वदर्शी भवभरः।।**[3]

डॉ० राम शरण दास ने लोक के विषय में लिखा हैं - "अशिक्षित , असंस्कृत, सरल व अकुत्रिम जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्तियों के विश्वास , मान्यताएँ, रीति - रिवाज, परम्पराएं, सामूहिक एवं पारिवारिक जीवन के विविध रंगीन चित्र अपनी अटूट परम्परा के कारण लक्षित हुआ, उन्हें लोक तत्व कहा जाता हैं। ऐसे लोक के विभिन्न विश्वासों, रीति रिवाजों, अनुष्ठानों एवं परम्पराओं का अनुसंधान करना ही किसी कवि के काव्य के लोक तत्वों का अध्ययन करना कहलाता हैं।[4]

अर्थात लोक संगीत समाज का ही प्रतिबिम्ब हैं, जो समाज की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता हैं। लोक संगीत क्षेत्रीय संगीत होने के कारण बहुत ही सहज और सरल हैं, हर क्षेत्र के संगीत की लोक धुन , लोक गीत व लोक वाद्य भिन्न होते हैं। लोक संगीत में यदि बात की जायें तो राजस्थान का संगीत बड़ा ही अद्भूत हैं, इस क्षेत्र की परम्परा, संस्कृति व कला के सौन्दर्य से विरलय ही कोई अछूता रहा हो, इस क्षेत्र में गुण हैं सबको अपनी और आकर्षित करने का। इस प्रदेश की हर बात व इनके दैनिक कार्यो में भी संगीत हैं, जन साधारण के लूर, ईंडाणी, हिचकी, सुपणा, काजलिया आदि रोजमर्रा के संगीत से लेकर व्यवसाय तक में संगीत के रूप हैं। राजस्थान की हरी भरी अरावली की सुदंर पर्वत माला और रेत के ऊँचे - ऊँचे पहाड़ों के मनोरम सौन्दर्य राजस्थान को अन्य क्षेत्रों या प्रान्तों से विलग करते हैं। अरावली की तलहटी और राजस्थान के रेतीले टीलों में रहने वाली जनजातियों का लोक संगीत अति मनोरम और समृद्ध हैं, राजस्थान की जनजाति अपनी संस्कृति, परम्परा, अपने तीज - त्यौहार, मेलों के हर्ष को लोक संगीत के माध्यम से ही अभिव्यक्त करती हैं। राजस्थान की बहुत सी जनजातियों ने संगीत के साथ साथ वाद्यों का भी निर्माण किया हैं, जिन्होने विश्व पटल पर अपनी पहचान बनाई।

*3. महाभारत, आदि पर्व - 1, 10,2, पृ० सं० - 3*
*4. मीरा के पदों में लोक तत्व, मीरा स्मारिका साहित्य निकेतन, अजमेर, पृ० सं० .187 .188*

OPINION TODAY
National Bilingual (Hindi–English) Quarterly, Peer-Reviewed and Refereed Journal
Vol. 02, No. 02 (2026): April-June ISSN No. : 3108-2661

राजस्थानी संगीत की परंपरा अधिकतर जनजातियों की देन हैं। अरावली पर्वत माला व रेत के ऊँचे-नीचे टीलों में अपना जीवनयापन करने वाली जनजातीयों ने अपने संगीत, अपनी सभ्यता, संस्कृति व अपनी परंपराओं को अन्य से अछूता रखा हैं। यहां विचरने वाली जनजातीयां अपनी संस्कृती व अपनी कला का संवर्धन करने का निरंतर प्रयास कर रही हैं। विशेषतः संगीत की बात की जाए तो राजस्थान की जनजातियों ने इस पर विशेष काम किया है। जनजातीय संगीत उनके दैनिक दिनचर्या, धर्म, तीज - त्यौहारों पर ही परिलक्षित होता हैं। जनजातीय संगीत में श्रृंगार व वीर रस की प्रधानता होती हैं। राजस्थान के जयपुर में निवास करने वाली जनजाति का संगीत न केवल चित्त मनोरंजन के लिए हैं, बल्कि इसके अतिरिक्त यह उनके जीवन यापन का भी आधार हैं। जो निम्नांकित हैं:-

**भोपा जनजातिः-** इस जनजाति में गोगा जी, भेरुजी, पाबूजी व हड़बूजी आदि के भोंपे अलग अलग होते हैं। यह जनजाति अपने पूर्वजों, अपने ईष्ट देवताओं व देवी देवताओं के गीतों को गाती हैं, और इन गीतों के साथ राजस्थानी लोकवाद्य रावण हत्था वाद्य का वादन करती हैं, और भैरू जाति के भोंपे मशक वाद्य का प्रयोग करते हैं। इनकी स्त्रियां भी बहुत ऊंची टेर में गीतों को गाती हैं। इनके गीत बड़े ही मधुर व सौन्दर्यपूर्ण होते हैं तथा यह लोग अपने गीतों में मूमल, बीछूड़ो आदि राजस्थानी लोकगीतों को भी गाकर सुनाते हैं, जैसे:-

**भेरुजी की भोपें जी भैरू थांने बावड़या लादया,**
**छेवरिया रे मांय भैरूं भावो क्यूं नई गाढ़ा हाय राम।।**[5]

मूमल एक राजस्थानी प्रांत का ही लोकप्रिय गीत हैं, इसमें मूमल नामक राजकुमारी का नख - शिख का वर्णन हैं:-

**म्हारी बरसाने री मूमल,**
**हालैनी ऐ आलीजे रे देस।।**[6]

**रावल जनजातिः-** रावल जाति चारणों व घांघल राजपूतों के आश्रय में ही गाती बजाती हैं। यह जाति रम्मतों के लोकगीत ही गातें हैं, अर्थात संगीतिक नाट्य का मंचन करते हैं। रम्मतों के गीत चौमासा, लावणी गणपति वंदना तथा व्यक्ति विशेष पर आधारित होते हैं। जैसे - चौमासा या बारिश के चार महीनें इस प्रातं में सबसे अधिक सुहावनें होते हैं। अतः यहां चौमासे पर आधारित गीतों का बड़ा ही महत्व है।

**औरे रंगीलों धण रो केवड़ों जी राज।**
**ओतो बायो बायो पान दुपान म्हारो राज।।7**

अन्य गीत गायक जनजातियों में ढाढी, ढोली, मिरासी या कलावंत, भवाई, लंगा, कामड़, जोगी, भोपा कालबेलिया आदि प्रमुख हैं। इन जनजातियों के गाने का ढंब बडा ही मनमोहक होता हैं। सोरठ, मांड, मारू आदि रागों में गायन करते हैं। ढाढी या मांगणियार जनजातिः- ढाढी जनजाति अपने " ढोलामारू" लोककाव्य रचना के लिए प्रसिद्ध हैं। यह जनजाति अपने यजमानों की वंश वृक्ष के ही गीत गाती हैं। गायन वादन के आधार पर यह जाति भिक्षा मांगने का कार्य भी करती हैं, जिसके कारण इन्हें "मांगणियार" भी कहते हैं। यह जाति अपने गीतों के संग कमाइचा व चिकारा वाद्य का प्रयोग करते हैं। ढाढी या मांगणियार जनजाति के द्वारा लिखे गये ढोलामारू के गीत कुछ इस प्रकार हैं -

*5. राजस्थान का लोक संगीत - खुराना शन्नो, पृ० स० - 58 - 1995*
*6. राजस्थान का लोक संगीत - सामर लाल देवी, पृ० स० - 43 -1957*
*7. राजस्थान का लोक संगीत - सामर लाल देवी, पृ० स० - 53 - 1957*

OPINION TODAY
National Bilingual (Hindi–English) Quarterly, Peer-Reviewed and Refereed Journal
Vol. 02, No. 02 (2026): April-June ISSN No. : 3108-2661

**"या प्रेम पत्रिका दीजो**
**म्हारा मारूजी ने जाई कीजो**
**आंसू पड़-पड़ अंगिया टपके।**[8]

**ढोली:-** ढोल वाद्य के वादन के कारण यह जनजाति ढोली कहलाये, इस जनजाति की महिलाएं क्षेत्रीय गीत गाने में बड़ी ही पारंगत होती हैं, इनकी आवाज बहुत ही मधुर होती हैं, जो प्राकृति का आर्शिवाद स्वरूप इन्हें प्राप्त होता हैं। यह जनजाति गायन के साथ -साथ वाद्यो में शहनाई, नगाड़ा, ढोलक व सारंगी का वादन करने में भी कुशल होते हैं। यह जनजाति दीपावली, होली व रक्षाबंधन जैसे अन्य त्यौहारों पर वशेष रूप से ढोल बजाती है, व यह जनजाति जयपुर में राणा नाम से जानी जाती है इनका मांड गायकी में कोई सानी नहीं हैं। इनके द्वारा मांड़ गायकी का लिखित साक्ष्य कुछ इस प्रकार हैं -

**"थांको छे जी भूलणों स्वभाव जी।**
**मीठा बोली ने भूलो ना,**
**बाण प्यारी ने भूल्या नाही सरे जी म्हारा राजा।।9**

**मिरासी या कलावंतः-** यह कोई जाति या जनजाति नही हैं, बल्कि मिरासी मुसलमान कलावंत को ही कहते हैं। इस जाति में भी पुरुष व महिलाएं दोनों ही गाने, बजाने व नाचने में निपुण होते हैं। यह भी मांड गायकी में पारंगत होते हैं। किन्तु इस जनजाति का मांड़ ढोली जनजाति से भिन्न हैं।

**केसरिया बालम,**
**आओ सा पधारो म्हारे देश।**
**साजन आया सखी कांई भेट करा,**
**थाल भरा गज मोतियां सो।**
**ऊपर नैन धरा,**
**केसरिया बालम।।10**

कामड़ जनजातिः- यह जनजाति धार्मिक अवसरों पर गाती हैं। यह लोग ईश्वर स्तुति में तंदूरा व चिकारा वाद्य का प्रयोग कर गीत गाते हैं। इस जाति की स्त्रियां धार्मिक गानों व तेरह ताली बजाने में बड़ी ही निपुण होती हैं। तेरह ताली में घन वाद्य मंजीरे को बजाने का एक मनमोहक कठिन और कलात्मक ढंग होता है जिसका प्रदर्शन कामड़ जाति द्वारा किया जाता है, तेरह ताली राजस्थान का प्रमुख लोकनृत्य हैं।

**भवाईः-** भवाई कोई जनजाति नही हैं, बल्कि इसके अंर्तगत भील, मीणा, जाट, रैगर, कुम्हार, कालबेलिया व अन्य जनजातियां आती हैं। यह सभी जनजाति भवाई नृत्य करने में भी बड़ी ही कुशल होती हैं। बिना गीत के भवाई नृत्य करना असंभव हैं। भवाई नृत्य के साथ ढोल और मंजीरें का वादन होता हैं, किंतु पुर्व में सारंगी, नफीरी, नक्काड़े जैसे वाद्यों का वादन होता था। सारंगी के स्थान पर आजकल हारमोनियम वाद्य को प्रयोग में लाया जा रहा हैं। ये जनजातियां हास्य प्रधान गीत ही गाती हैं, जैसे -

***8.*** *राजस्थान का लोक संगीत - सामर लाल देवी, पृ० स० - 86 - 1957*
***9.*** *राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा सं० - डॉ० जयसिंह नीरज पृ० सं० - 133 - 2023*
***10.*** *राजस्थान का लोक संगीत - खुराना शन्नो, पृ० स० - 151- 1995*

OPINION TODAY
National Bilingual (Hindi–English) Quarterly, Peer-Reviewed and Refereed Journal
Vol. 02, No. 02 (2026): April-June ISSN No. : 3108-2661

**बाजण लागा वायरा, ऊडण लागी खेह।**
**चालण लागो सायबो, मारो टूटण लागो नेह।।11**

**लंगा जनजातिः-** लंगा जनजाति के द्वारा दो तरह के गीत गाये जाते हैं, एक स्त्रीयों द्वारा मांगलिक अवसरों पर गाए जाने वाले गीत व दूसरा जटिल संगीत स्वरूप लिए हुए गीत। दुसरे प्रकार के गीतों का साहित्य बड़ा उच्च कोटि का व जटिल होता हैं। इन गीतों में छंद काव्य की भरमार होती हैं। इनके गायन में शास्त्रीय संगीत का स्वरूप मिलता हैं जैसेः- राग काफी, गूंड, मल्हार, तोड़ी, सोरठ मारू व अन्य रागों का प्रयोग होता हैं। यह जाति विशेष प्रकार का एक लोकगीत गाती हैं, जो "जांगड़ा" नाम से प्रसिद्ध हैं। इस जनजाति के लोग जांगड़ा को सिंधी सारंगी व गुजरातन सारंगी के साथ गाते हैं। यह लोग मांड की भी गायकी करते हैं, तथा अपने गीतों के साथ कमाइचा, सुरनई, मुरला, शहनाई व सुरिन्दा जैसे वाद्यों का वादन करते हैं। लंगा जनजाति के द्वारा गाये जाने वाले गीत विशेषतः जांगड़ा का प्रकार हैं, जैसेः-

**"पनि, थारे, पिवरो कोणी नांम कांही,**
**लंगर तोड़ा रे लाजरा,**
**आतोः जाण पठाघर जाए।। 12**

**जोगी जनजातिः-** इस जनजाति के लोग अधिकतर गाने बजाने का ही काम करते हैं, यह नागपंथी होते हैं, व भरथरी गोपीचंद और शिव जी का विवाह आदि प्रबंध गीतों को चतुर्मास में गाकर सुनाते हैं।कुछ जोगी जनजाति सुल्तान निहाल दे के पावड़े भी गाकर सुनाते हैं। यह लोग सारंगी (जोगिया सारंगी) वाद्य के वादन के साथ अपने गायन को पूरा करते हैं। इनके चतुर्मास गीत कुछ इस प्रकार हैंः-

**"एंजी म्हारे लेरा लागा रमता जोगी,**
**अरे लार मइया पिगंला।**
**राजा जी अरे सासू ने बना सूनो सासरो**
**माता बना कैसा पीर, राजा भरथरी।। 13**

**कालबेलिया जनजाति :-** कालबेलिया जनजाति एक जगह से दूसरी जगह घूम - घूमकर कर पुंगी व खंजरी जैसे लोक वाद्यों का वादन कर गीत गाते रहते हैं। इनकी स्त्रियां भी बहुत मीठा गाती हैं, इन महिलाओं की पोशाक बड़ी ही कलात्मक और सौंदर्यपूर्ण होती हैं। यह अपनी पुंगी पर ही धूनों को बजाते हैं, जो बड़ी ही मनमोहक होती हैं। यह लोग पुंगी पर निम्न प्रकार के धुनों का प्रयोग करते हैं जैसेः-

**इंडोणी - पाड़ोसण बड़ी चकोर गम गई इंडाणी।**
**पणिहारीः- कुन रे खुदाया कुवा बावड़ी, ए पणिहारी ए लो।**
**लूरः- सागर पाणीडै नै जाऊँ नजर लग जाय। 14**

जैसे लोकधुनों को कालबेलिया जलजाति द्वारा गाया व बजाया जाता हैं।

***11.*** *राजस्थान का लोक संगीत - सामर लाल देवी, पृ० स० - 86 - 1957*
***12.*** *राजस्थान का लोक संगीत - खुराना शन्नो, पृ० स० - 20 - 1995*
***13.*** *राजस्थान का लोक संगीत - देवी लाल सामर, पृ० स० - 25 -1957*
***14.*** *राजस्थान के लोकगीत और उनमें प्रयुक्त लोकवाद्य - डॉ० अनिता, पृ० सं० - 111- 2012*

OPINION TODAY
National Bilingual (Hindi–English) Quarterly, Peer-Reviewed and Refereed Journal
Vol. 02, No. 02 (2026): April-June ISSN No. : 3108-2661

उपसंहार:-ऐसी बहुत सी और अन्य जनजाति हैं, जो अपने गीतों व वाद्यों के माध्यम से अपनी परंपरा

का संरक्षण कर रही हैं, किन्तु वर्तमान में इनको सहेजने वाले लोग या तो अपने जीवनोपार्जन हेतु और कार्यो में लिप्त हैं या जो इनका संवर्धन करने का प्रयास कर रहें हैं, उनके द्वारा प्राप्त संसाधन बहुत ही कम हैं, जिसके कारण इन्हें अन्य कार्यो पर आश्रित होना पड़ रहा हैं, और यही कारण हैं कि यह प्रांतिय समृद्ध सांगीतिक संस्कृति का प्रयोग या तो कम हो गया हैं या विलुप्त हो गया हैं। इसके पुर्नत्थान के लिए सरकार को इन गतिविधियों को अपने संज्ञान में लेना चाहिए, व संगीत अनुरागियों को भी इस समृद्ध धरोहर को बचाने के लिए भरसक प्रयास करना चाहिये, व इन गीतों, वाद्यों व नृत्यों को पुनर्जीवित करने के लिए इनका प्रयोग करना चाहिये।

**संदर्भ ग्रन्थ सूची**

1. व्यास, डॉ0 राजेश कुमार - सांस्कृतिक राजस्थान, - राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी -2019
2. जैन, डॉ0 हुकम चन्द, माली, डॉ0 नारायण लाल - राजस्थान का इतिहास, संस्कृति, परम्परा एवं विरासत - राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी - 2021
3. सामर, देवीलाल, -राजस्थान का लोक संगीत - 1957 - भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर
4. खुराना, शन्नो - राजस्थान का लोक संगीत - सिद्धार्थ पब्लिकेशन, नई दिल्ली- 1995
5. नीरज, डॉ0 जयसिंह - राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा सं0 - राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी - 2023
6. डॉ0 अनिता -राजस्थानी लोकगीत और उनमें प्रयुक्त लोकवाद्य - शलभ पब्लिशिंग हाउस, मेरठ -2012
7. शर्मा, डॉ0 महारानी - संगीत मणि - भाग- 1, - 2012
8. शर्मा, डॉ0 महारानी, - संगीत मणि - भाग- 2,, डॉ0 शर्मा जया - 2018
9. 'यमन', अशोक कुमार - संगीत रत्नावली - अभिषेक पब्लिकेशन - 2008